शोध मंथन Vol. XVII No.2 Apr.- June. 2026 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X, Impact Factor 8.889 (SJIF)
https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.027

रहीम के नीति काव्य में सामाजिक समरसता और लोकमंगलः एक समग्र विश्लेषण

प्राप्तिः 23.03.2026
स्वीकृतः 05.06.2026

27

डॉ पूनम पाण्डेय
सहायक आचार्य (हिंदी विभाग)
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश
ईमेलः *poonampandaysid@gmail.com*

सारांश

हिंदी भक्ति काव्य परंपरा में नीति काव्य की एक सशक्त और लोक–स्वीकृत धारा देखने को मिलती है। इस धारा के प्रमुख कवियों में अब्दुर्रहीम खानखाना (रहीम) का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। रहीम मुगल सम्राट अकबर के नवरत्नों में सम्मिलित विद्वान और कुशल सेनापति थे। वह भारतीय समाज, लोक–जीवन, नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं के गहरे अध्येता भी थे। उनके काव्य में जीवन के व्यावहारिक अनुभवों से उपजी ऐसी शिक्षाएँ मिलती हैं जो सामान्य जन के लिए सरल और मार्गदर्शक हैं। रहीम की दोहावली विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इसमें संकलित दोहे जीवन के विविध पक्षों जैसे प्रेम, दया, विनम्रता, परोपकार, संबंधों की मर्यादा और मानवीय व्यवहार पर गहरी सीख देते हैं। रहीम ने अपने दोहों में अत्यंत सरल, सहज और लोकभाषा का प्रयोग किया है, जिसके कारण उनकी बातें सीधे जनमानस तक पहुँचती हैं। उदाहरण के लिए उनका प्रसिद्ध दोहा–"रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाय...... ।" यह मानवीय संबंधों की कोमलता और उनके संरक्षण का संदेश देता है।

रहीम की नीति–काव्य परंपरा की विशेषता यह है कि उसमें किसी प्रकार का उपदेशात्मक बोझ नहीं है। वह जीवन के अनुभवों से निकली सहज सीख है। वे मनुष्य को विनम्रता, संयम और सदाचार का मार्ग अपनाने की प्रेरणा देते हैं। यही कारण है कि उनके दोहे केवल साहित्यिक रचनाएँ ही नहीं, बल्कि जीवन–दर्शन के सूत्र बन गए हैं। आज के आधुनिक और जटिल समाज में भी रहीम के दोहे उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उनके समय में थे। उनकी रचनाएँ हमें मानवीय मूल्यों, सामाजिक सद्भाव और नैतिक आचरण का संदेश देती हैं। इस प्रकार रहीम की दोहावली हिंदी साहित्य में नीति काव्य की एक अमूल्य धरोहर है, जो सदैव समाज को सही दिशा प्रदान करती रहेगी।

मुख्य शब्द

नीति–काव्य, लोकजीवन, नैतिक चेतना, नैतिक संहिता, समरसता

भूमिका

हिंदी साहित्य का मध्यकाल सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से गहन परिवर्तन का दौर था। इस युग के समाज का आधार सामंतवाद था और युगीन बादशाह शासन का सर्वेसर्वा होता था। सामंत वर्ग बादशाह की इच्छानुसार और उसकी इच्छा पर्यंत शासन तंत्र का संचालन करता था। इस वर्ग में संभ्रांत स्थिति वाले समस्त हिंदू, मुगल, तुर्क, अफगान आदि सम्मिलित थे। समाज का यह उच्च वर्ग अपव्ययी, वैभव और विलासिता पूर्ण जीवन व्यतीत करता था। दूसरी ओर निम्न मध्यम वर्ग के लोग थे जिनकी आमदनी अपेक्षाकृत कम थी और तदनुरुप ये अपने खर्चों को सीमित रखते थे। इन सभी वर्गों के नीचे किसान–मजदूर का वर्ग था, जिनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति हीन और दयनीय थी। समाज में नारियों की दशा भी नितांत सोचनीय थी। समाज अनेक स्तरों पर विखंडन का शिकार था–धार्मिक मतभेद, जातिगत असमानताएं आर्थिक विषमता और सत्ता संघर्ष से सामाजिक ताना–बाना जर्जर हो रहा था। इस उथल–पुथल के दौर में साहित्य सृजन सशक्त और अत्यंत प्रभावशाली रूप में आकार ग्रहण कर रहा था। इस युग के साहित्य में सौंदर्य– बोध के साथ–साथ समाज संरचना, मानवीय मूल्यों की स्थापना और नैतिक चेतना का प्राबल्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस काल में रचित नीति–काव्य ने दिशाहीन लोक जीवन को रोशनी दिखाने,आचरण को संयमित करने और सामाजिक संतुलन बनाए रखने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

इसी दौर में रहीम का नीति–काव्य लोकजीवन के लिए नैतिक संहिता के रूप में उभरता है। उनके दोहे किसी एक वर्ग, धर्म या संप्रदाय तक सीमित न होकर समूची मानवता के लिए समान रूप से उपयोगी एवं प्रासंगिक हैं। यही कारण है कि रहीम का काव्य सामाजिक समरसता का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। उनके नीतिपरक दोहों में राज सत्ता की चापलूसी और संप्रदाय विशेष समर्थन नहीं है। वे सीधे–सीधे मानव जीवन के यथार्थ से संवाद करते हैं। रहीम मानते हैं कि सामाजिक स्थिरता और प्रगति का आधार नैतिक आचरण, आपसी विश्वास और मानवीय संवेदना है।

नीति काव्य की परंपरा और रहीम– सामान्यतः वे साधन जो मानव जीवन को धार्मिक, मानसिक, भौतिक आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि समस्त क्षेत्र में प्रगति के पथ पर ले जाए वही नीति है। डॉ. भोलानाथ तिवारी का मत है, ''हमारे समाज के लिए इस नीति काव्य के छंद और छदांश लोकोक्ति बन गए हैं और जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रों में वे जनता की समस्याओं को सुलझाते हैं एवं उनके कंधे पर हाथ रखकर सुख–दुख में उचित मार्ग के अनुकरण की प्रेरणा देते हैं।''1

हिंदी नीति–काव्य परंपरा की शुरुआत दसवीं सदी के गोरखनाथ के उपदेश के छंदों से मानी जाती है। इसके उपरांत चंद्रवरदाई के 'पृथ्वीराज रासो' के नीति के छंदों में, जगनिक के 'आल्हखंड' के नीति के छंदों में, कबीर के उपदेश तथा नीति की साखियों एवं पदों में, रविदास तथा गुरु नानक के उपदेश तथा नीति के दोहों, पदों तथा साखियों में, जायसी के 'पद्मावत' तथा 'अखरावट' के नीति और उपदेश के छंदों में इसका प्रस्फुटन परिलक्षित होता है। आगे चलकर देवीदास, नरहरि, टोडरमल, बीरबल, अग्रदास, जमाल और दादू के छंद, छप्पय, कुंडलियां तथा दोहे में, तथा तुलसी के सभी ग्रंथों में एवं रहीम की दोहावलियों में इसको देखा जा सकता है।

रहीम अकबर के समकालीन थे। यद्यपि उन्हें फारसी, अरबी, तुर्की और संस्कृत भाषा पर समान अधिकार था परंतु उन्होंने ब्रज और अवधी मिश्रित हिंदी को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.027

बनाया। उनका जीवन संघर्ष, वैभव, अपमान और वैराग्य से होकर गुजरा। यही जीवनानुभव उनके नीति दोहों में परिपक्व रूप में प्रकट होता है। रहीम का काव्य दरबारी चाटुकारिता से मुक्त है और आम मनुष्य के जीवन संघर्ष का साक्ष्य है। रहीम के संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं, ''अपने उदार और ऊंचे हृदय को संस्कार के वास्तविक व्यवहारों के बीच रखकर जो संवेदना इन्होंने प्राप्त की है उसी की व्यंजना अपने दोहों में की है। तुलसी के वचनों के समान रहीम के वचन भी हिंदी भाषी भू–भाग में सर्वसाधारण में अतिशय प्रचलित हैं। इसका कारण है जीवन की सच्ची परिस्थितियों का मार्मिक अनुभव।''[2] वस्तुतः जीवन की मार्मिक परिस्थितियों के वास्तविक पक्षों के ग्रहण करने की क्षमता जिस कवि में होगी निश्चित रूप से वह जनप्रिय कवि होगा। आचार्य चतुरसेन का मानना है कि ''इनमें जीवन की सच्ची अवस्थाओं के मार्मिक बिंबो की पकड़ रखने की ऐसी क्षमता थी कि इन्हें व्यर्थ की कल्पना की उड़ान लेनी ही नहीं पड़ती थी।''[3]

रहीम की कविता बड़ी ही सरस, मधुर और नीति युक्त है। इनके द्वारा शब्दों और पदों का जिस उपयुक्त रीति से अतुलनीय विधान किया गया है। आचार्य चतुरसेन लिखते हैं, ''उनकी कविता इतनी जीवंत है कि इसमें कल्पना से अधिक सत्यता है, ये हमारे जीवन के अत्यंत निकट हैं। इनकी नीति की रचना में ऐसी सजीवता और प्रेषणीयता है कि सुनकर प्राण बंध जाते हैं।''[4] इसी प्रकार मआसिरी रहीमी में उल्लेख मिलता है कि ''उनकी रीत, नीति और भक्ति के भाव सीधे–साधे और असरदार थे। भाषा इनके कविता–कुसुम की सुहानी डाल थी, भाव बहार और छंद सजाव थे। अपनी भाषा कौशल, भावानुभूति, अध्ययन–मनन, शील–स्वतंत्रता, सहृदयता– भावुकता एवं विराट प्रतिभा के कारण यह हिंदी शायरी के ''यदेबैजा'' कहे जाते थे।''[5] यह सत्य है कि रहीम के हाथ खोलते ही अर्थात कलम छूते ही हिंदी कविता जगत में नव–विहान का आभास दिखता था और नई किरणों के कुमकुम जमीं पर बिछ जाते थे। चाहे जो हो, पर यह बात बिना संकोच के मानी जा सकती है कि हिंदी के मुसलमान कवियों और लेखकों में तो रहीम का स्थान ऊंचा है ही, समस्त कवियों में भी यदि इनकी गणना साहित्य के नवरत्नों में नहीं है तो चतुर्दश रत्नों में अवश्य है।[6]

रहीम के नीतिपरक दोहों का विश्लेषण

जीवन दर्शन

मानव जीवन के फलाफल, सुख–दुःख, लाभ हानि आदि का नियमन नियति के द्वारा होता है। जीवन के प्रतिबिंब सदृश काव्य पर भी नियति का स्पष्ट प्रभाव है और नीति–काव्य तो इस भाव से पूरी तरह पूरित हैं। भाग्य या समय के फैसले पर जीवन गाड़ी चलती या रूकती है। रहीम का भी यही दृष्टिकोण है कि पुरुषार्थ और उद्यम तो सब कोई करता ही है, दरअसल भाग्य ही सब कुछ है। रहीम का मानना है कि जब समय खराब चल रहा होता है तो मित्र भी शत्रु सदृश आघात करता है। जहां भाग्य साथ नहीं देता वहां केवल अंधकार ही अंधकार है।

जेहि अंचल दीपक दुरयो, हन्यो सो ताही गात।
रहिमन असमय के परै, मित्र शत्रु है जात।।[7]

रहीम का जीवन दर्शन अनुभवजन्य है। वे जीवन को संघर्ष और विवेक का समन्वय मानते हैं। उनका मानना है कि बुरा समय आने पर धैर्य तथा सावधानी से अच्छे समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए–

रहिमन चुप है बैठिए, देख दिनन के फेर।
जब नीके दिन आइहैं, बनत न लगिहैं देर।।[8]

वस्तुतः रहीम की नीति दृष्टि में नियति और कर्म एक दूसरे के पूरक हैं। वे भाग्यवाद को तो स्वीकारते हैं किंतु उसे कर्महीनता का आधार नहीं बनने देते।

प्रेम

प्रेम मानव जीवन का रस है। प्रेम के बिना मानव जीवन अर्थहीन और सारहीन है। प्रेम की गहराई में जात–पांत, सुंदर–असुंदर, गुण–अवगुण, अपने–पराए का भेद नहीं रह जाता है। यह उस सुधा बूंद के सदृश है जिसका पान जीवन को मधुर बना देता है। रहीम कहते हैं सच्चे प्रेम का असर तो रोम–रोम से प्रकट होता है। आंखें तो उनकी संकेत–दूतिका ही हैं–

कहि रहीम इक दीप तें, प्रकट सबै दुति होय।
तन सनेह कैसे दुरै, दृक दीपक जरू दोय।।[9]

वह आगे कहते हैं 'प्रेम' अतिशय नाजुक होता है, जिसे संभाल कर रखना होता है क्योंकि यदि टूट जाता है तो दाग रह जाता है–

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो छिटकाय।
टूटे से फिर ना मिले, मिले गांठ परि जाय।।[10]

स्वभाव

कहा गया है कि स्वभाव मनुष्य की सच्ची परख है जिसमें उसका गुण, अवगुण, वाणी, मनोवृत्ति आदि सभी बातें समाहित होती हैं। जिस इंसान का स्वभाव अच्छा होता है और उसे अच्छे बुरे का ज्ञान होता है उसके ऊपर किसी कुसंगति का कोई प्रभाव नहीं होता–

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग।।[11]

कुसंगति

रहीम ने कुसंग व्यक्तियों के साथ को बहुत घातक बताया है क्योंकि नीच व्यक्तियों के संगत का असर अवश्य होता है–

रहिमन नीचन संग वासि,लागत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि, मद समुझहिं सब ताहि।।[12]

दरअसल, सही अर्थों में तो संसार गुण–दोषमय है। यद्यपि दुर्गुणों तथा दोषों की शास्त्रकारों और नीतिकारों द्वारा घोर निंदा की गई है। रहीम का कथन है ऐसे व्यक्ति जो दुर्गुणों के खान हैं उनका दुर्गुण कभी नहीं जाता। ऐसे दुर्गुणों का साथ निश्चय ही प्रभाव डालता है और ऐसे लोग संसार में विष फैलाने वाले होते हैं। वे लिखते हैं–

ओछे को सतसंग रहिमन तजु अंगार ज्यों।
ततो जरै अंग सीरो पै करो लगै।।[13]

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.027

दया और मानवीय संवेदना

इस संबंध में रहीम कहते हैं–

रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिए डारि।
जहां काम आवै सुई, कहा करे तलवारि।।[14]

रहीम का यह दोहा सामाजिक समरसता की आधारशिला 'उपयोगिता और सम्मान' की स्थापना का द्योतक है। यहां रहीम छोटे–बड़े, सबल–निर्बल के भेद को नकारते हुए लोक– मंगल की व्यावहारिक नीति प्रस्तुत करते हैं।

परोपकार एवं त्याग

परोपकार एवं त्याग से न केवल यश और सम्मान की प्राप्ति होती है अपितु उनसे चरित्र निर्माण और आध्यात्मिक शक्ति का भी जागरण होता है। त्यागी एवं परोपकारी व्यक्ति ही वास्तविक अर्थों में धर्मात्मा होते हैं। आज भी दधीचि और शिवि आदि को उनकी सर्वोच्च परोपकारिता और त्यागशीलता के कारण ही याद किया जाता है। रहीम कहते हैं–

रहिमन पर उपकार के, करत यारी बीच।
माँस दियो शिवि भूप ने, दीन्हों हाड़ दधीच।।[15]

मर्यादा

रहीम कहते हैं मर्यादा उत्तम चरित्र का ध्वज है और जीवन की ज्योति है। इसे एक प्रकार से साधनमय जिंदगी के लिए प्रेरणा स्रोत के रूप में समझा जा सकता है, जो मनुष्य को श्रेष्ठता प्राप्ति की ओर बढ़ाती है तथा स्खलित होने से रोकती है।

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरै, मोती मानुष चून।।[16]

वस्तुतः यही पानी या मान इंसान के जीवन का सार है–

मान सहित विष खाय के, संभु भयो जगदीस।
बिना मान अमृत पिये, राहु कटायो सीस।।[17]

दुःख विपत्ति

एक तरह से देखा जाए तो दुःख मन को पवित्र करने वाला तथा आत्मा में ज्ञान की नई ज्योति भरने वाला होता है। दुःख की यह खास विशेषता है कि लोग उसकी आंच में तप कर विशुद्ध हो जाते हैं। दुःख और विपत्ति के समय ही मनुष्य को अपने और पराए का भान होता है। दुःख से ही इंसान के भीतर आत्मनिर्भरता, आत्मावलोकन तथा निर्भयता का भाव उत्पन्न होता है। दुःख की दिव्यता में ही वह भगवान के अति निकट होता है और संसार संबंधी भेद के घास–पात जलकर राख हो जाते हैं।

दिव्य हीनता के रसहिं,का जाने जगु अंध।
भली विचारी दीनता, दीनबंधु से बंधु।।[18]

वस्तुतः दुःख वह कसौटी है जिसके द्वारा सच्चे, अच्छे, बुरे, मित्र, घर—परिवार और सगे संबंधियों की असली परीक्षा हो जाती है। रहीम कहते हैं विपत्ति से पहचान और विवेक बढ़ता है—

रहिमन विपदाहू भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जान परत सब कोय।।[19]

अहंकार निषेध और सामाजिक संतुलन

रहीम के नीति विषयक दोहों में अहंकार का निषेध सामाजिक संतुलन की आधारशिला के रूप में सामने आता है। उनके अनुसार अहंकार मनुष्य को समाज से काट देता है और उसके विवेक को क्षींण करता है—

रहिमन मनहिं लगाइकै, देखि लेहु किन कोय।
नर को बस करि वो कहा, नारायन बस होय।।[20]

उनके नीति विषयक दोहे व्यक्ति को विनम्र, सहिष्णु और उत्तरदाई बनाकर समाज में संतुलन और सद्भाव की स्थापना करते हैं।

विनय और सामाजिक समरसता

रहीम मानते हैं कि विनम्रता से ही मनुष्य समाज में सम्मान और विश्वास अर्जित करता है। उनके दोहों से सामाजिक व्यवहार, मर्यादा और आत्म संयम की सीख मिलती है जिससे जीवन में संतुलन कायम होता है।

रहिमन निज मन की बिथा, मन ही राखो गोय।
सुनि अठिलैहें लोग सब, बांटि न लैहैं कोय।।[21]

मित्रता और सामाजिक संबंध

रहीम के अनुसार मित्र वही है जो सुख में नहीं बल्कि संकट में साथ निभाए। वे कहते हैं— समाज की स्थिरता संबंधों की मधुरता पर आधारित है—

कहि रहीम संपति सगे,बनत बहुत बहु रीत।
बिपति कसौटी जे कसे, सोही सांचे मीत।।[22]

लोक कल्याण और सामाजिक उत्तरदायित्व

रहीम के दोहों में लोक—कल्याण और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना अत्यंत प्रबल रूप में अभिव्यक्त होती है। उनके अनुसार दूसरों के दुःख को दूर करना ही सच्चा मानव धर्म है। इसी प्रकार वे समाज में परस्पर सहयोग, करुणा और नैतिक उत्तरदायित्व की चेतना सुदृढ़ करते हैं—

रहिमन रीति सराहिए, जो घट गुन—सम होय।
भीति आप पै डारि कै, सबै पिआबै तोय।।[23]

कहा गया है की चिंता चिता के समान होती है। यह ऐसा मनोरोग है जिसका प्रभाव मानव शरीर पर किसी व्याधि से काम नहीं पड़ता है। रहीम कहते हैं—

रहिमन कठिन चितान ते, चिंता को चित चेत।
चिता रहित निर्जीव को, चिंता जीव समेत।।[24]

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.027

निर्धन व्यक्ति कितना भी गुणी, विचारशील और सुंदर स्वभाव का हो लोग उसका सम्मान नहीं करते। रहीम निर्धन होकर अपने भाइयों के बीच बसने को असंगत मानते हैं–

वरु रहीम कानन भलो,बास करिय फल भोग।
बंधु मध्य धनहीन ह्वै,बसिबो उचित न जोग।।[25]

व्यक्ति को समाज में सम्मान एवं प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए बांणी की मधुरता आवश्यक तत्व है। बिना सोच–विचार के बोलना, समय अनुकूल न बोलना, अनावश्यक बोलना आदि बातें किसी भी इंसान के मूर्खता का प्रमाण होता है। शास्त्रों में कटुभाषियों को दंड का भागी बताया गया है। रहीम का भी यही कथन है–

खीरा सिर ते काटिए, मलिए लोन लगाय।
रहिमन करुबे मुखन को, चहियत यही सजाय।।[26]

राज शक्ति

राजकाज के भी अनुभवी रहीम ने राजशक्ति की चंचलता एवं अभिमान का भी अत्यंत सच्चा और स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने नारी के साथ ही साथ राजसत्ता से अति सावधान रहने का उपदेश दिया है–

उरग तुरग नारी नृपति,नीच जाति हथियार।
रहिमन इन्हें संभारिए, पलटत लगै न बार।।[27]

इस प्रकार रहीम की नीति शिक्षा संबंधी प्रत्येक बात पूर्णतया व्यावहारिक तथा गंभीर अनुभूतियों का दर्पण है। इस संबंध में रामकुमार वर्मा लिखते हैं, ''जीवन की प्रगाढ़ अनुभूति एवं सूक्ष्म सूझ को नीति के विभिन्न विषयों में बांटकर कवि ने जो नीति की अशातीत सफल रचना की है, वह काल–निशा में भी ज्योति शिखा की भांति जलती रहेगी। रहीम वस्तुतः हिंदी साहित्य के मशहूर सूक्तिकर और जीवन के सजग चित्रकार थे।''[28] डॉक्टर त्रिभुवन सिंह मत व्यक्त करते हैं, ''उनकी नीति के दोहे जीवन के गंभीर अनुभूतियों के मुखर विद्याधर हैं, जिनकी वीणा– वांणी अर्थभरी और रहस्यमयी है और यही इनकी लोकप्रियता के सफल स्तंभ हैं। इनकी नीति की उक्तियां प्रीति की भांति हर दिल को छूकर अपने में रमा लेती हैं। इनकी सलोनी नीति ऐसी है कि एक बार मुंह लगी तो सदैव सर चढ़ी रहती है। यह पंडित से सर्वसाधारण तक अपनी महिमा के कारण सूम की लक्ष्मी की भांति प्रिय बन गई है। नीति काव्य में रहीम की पूरी रहीमी उतर आई है। सरल, स्वाभाविक एवं मार्मिक रचना करने में हिंदी नीतिकारों में अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं रखते। रहीम के नीतिपरक दोहों का उनके समकालीन अथवा परवर्ती कवियों पर भी इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि घोर श्रृंगारिक रचना करने वाले रीतिकाल के कवियों के लिए नीतिपरक कुछ न कुछ रचना करना स्वाभाविक धर्म सा हो गया।''[29]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नीति–काव्य के क्षेत्र में रहीम की सफलता युगांतरकारी है। हिंदी साहित्य में उनके नीति संबंधी दोहों को जितनी लोकप्रियता और सम्मान प्राप्त हुआ, उतना अन्य किसी कवि को शायद ही मिल पाया हो। रहीम ने अपने अनुभव,

लोकज्ञान और गहन जीवन–दृष्टि के आधार पर ऐसे दोहों की रचना की जो सीधे जनमानस के हृदय तक पहुँचते हैं। उनकी वाणी में सरलता, स्पष्टता और गहन अर्थगर्भिता का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। रहीम के नीति काव्य में जीवन के अनेक महत्वपूर्ण विषयों का व्यापक चित्रण मिलता है। मर्यादा, काया, प्रेम, स्वार्थ, अभिमान, चिंता, कुसंगति, स्वभाव, दुःख–विपत्ति, नियति, वाकचातुर्य, परोपकार, त्याग, संतोष, सच्ची मित्रता, विधि–निषेध, अनीति–अन्याय, मूढ़ता तथा राजव्यवस्था जैसे विविध विषय उनके दोहों में स्वाभाविक रूप से प्रवाहित होते हैं। इन दोहों में केवल उपदेश नहीं, बल्कि जीवन के व्यावहारिक अनुभवों की सार्थक अभिव्यक्ति है। यही कारण है कि रहीम का नीति–काव्य सामान्य जन के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होता है।

जीवन को सचेष्ट, सचेतन, सुखमय और सरस बनाने के लिए रहीम का अनुभूतिमय नीति–काव्य अत्यंत उपयोगी है। इसकी सजीवता, कलात्मकता और व्यावहारिकता इसे अमृततुल्य बना देती है। उनके दोहे संक्षिप्त होते हुए भी गहरे जीवन–सत्य को प्रकट करते हैं और मनुष्य को सही आचरण की प्रेरणा देते हैं। वास्तव में रहीम का नीति काव्य सामाजिक समरसता और लोकमंगल की भावना का सशक्त साहित्यिक दस्तावेज है। उनके दोहे मनुष्य को नैतिक, संवेदनशील और सामाजिक प्राणी बनने की शिक्षा देते हैं। आज के विखंडित और तनावपूर्ण समाज में रहीम का नीति–काव्य सामाजिक एकता, सहिष्णुता और लोककल्याण की भावना को सुदृढ़ करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संदर्भ

1. तिवारी, भोलानाथ, (1958), हिंदी नीति काव्य; आगराः विनोद पुस्तक मंदिर।
2. शुक्ल, रामचंद्र. (2002). हिंदी साहित्य का इतिहास. नई दिल्लीः प्रकाशन संस्थान।
3. हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास; आचार्य चतुरसेन, पृ0सं0–**286**।
4. रहीम, अब्दुर्रहीम खघनखघना. (2015). रहीम दोहावली. नई दिल्लीः साहित्य अकादमी।
5. सिंह, भोलानाथ. (2015). रहीम के काव्य में नैतिक मूल्य, हिंदी साहित्य शोध पत्रिका, 8(2), पृ0सं0–**45–53**।
6. तिवारी, रामस्वरूप. (2014). मध्यकालीन हिंदी काव्य. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन।
7. रहीम साहित्य की भूमिका; दोहावली 69, पृ0सं0–**384**, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना।
8. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावली; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
9. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावली; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
10. गुप्ता, गणपतिचंद्र. (2016). हिंदी नीति काव्य की परंपरा. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन।
11. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावली; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
12. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावली; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन, दो. 210, पृ0सं0–**394**।
13. मिश्र, विद्यानिवास. (2010). भक्ति काव्य और लोक जीवन. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन।
14. मिश्र, विद्यानिवास. (2010). भक्ति काव्य और लोक जीवन. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन।
15. सिंह, नामवर. (2011). भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.027

16. सिंह, नामवर. (2011). भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
17. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावलीरु; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन।
18. नागेंद्र (2002) (संपादित), रहीम दोहावलीरु; नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन। पृ0सं0–**396।**
19. रहीम ग्रंथावली; पृ0सं0–**118।**
20. रहीम ग्रंथावली; पृ0सं0–**121।**
21. रहीम ग्रंथावली; पृ0सं0–**109।**
22. रहीम साहित्य की भूमिका; दो. 235, पृ0सं0–**396।**
23. रहीम साहित्य की भूमिका; दो. 178, पृ0सं0–**392।**
24. रहीम साहित्य की भूमिका; दो. 178, पृ0सं0–**392।**
25. रहीम साहित्य की भूमिका; दो 46, पृ0सं0–**382।**
26. रहीम साहित्य की भूमिका; दो.14, पृ0सं0–**380।**
27. वर्मा, रामकुमार. (2013). हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन।
28. सिंह, त्रिभुवन. (1976). दराबारी संस्कृति और हिंदी मुक्तक. वाराणसीः हिंदी प्रचारक पुस्तकालय।